Election Commission of India

16

NAME OF THE NEWSPAPER नवभारत टाइम्स DATE: 6 JUL 2012

पुराने भाव पर ही होगा इस बार राष्ट्रपति चुनाव

प्रदीप के सिंह ||

भारतीय लोकतंत्र को विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र होने का गौरव हासिल है। देश में एक व्यक्ति और एक मत की प्रणाली है। इसका मतलब यह है कि कश्मीर के किसी एक नागरिक के मत का जो मूल्य होगा, वही कन्याकुमारी और सिक्किम के भी किसी नागरिक के मत की कीमत होगी। लेकिन जनसंख्या बढ़ोतरी को आधार बना कर एनडीए शासनकाल में 2002 में एक कानून बनाया गया जो राष्ट्रपति चुनाव में उत्तर और दक्षिण भारत के वोटों का मूल्य गैर बराबर कर देता है। राष्ट्रपति के चुनाव में किसी भी विधायक के वोट का मूल्य उस राज्य की जनसंख्या के आधार पर तय होता है। लेकिन इस बार वोटों की कीमत 1971 की जनगणना के हिसाब से ही लगेगी। इस बात की जानकारी विपक्षी दलों को भी है और सत्ताधारी पार्टी को भी। 2002 में वाजपेयी सरकार ने एक संविधान संशोधन पारित कराया था। यह 84 वां संशोधन था। इसमें यह तय कर दिया गया कि 2026 से पहले होने वाले सभी राष्ट्रपति चुनावों में वोटों का मूल्य 1971 की जनगणना के आधार पर ही तय किया जाएगा।

इस संशोधन की कीमत बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र को चुकानी पड़ेगी। 1971 से आज तक कई राज्यों का जनसंख्या अनुपात बदला है। मसलन 1971 की जनगणना के हिसाब से तमिलनाडु का वोट शेयर 7.49 फीसदी है, जो 2001 के हिसाब से 6.04 फीसदी बनता है। वहीं इसका ठीक उलट्य बिहार के मामले में दिखता है। बिहार का वोट शेयर 1971 के हिसाब से 7.65 फीसदी है, लेकिन 2001 से हिसाब लगया जाए तो यह 8.08 फीसदी होना चाहिए।

इन 40 वर्षों में वोटों की कीमतों में भी भारी फेरबदल हुआ है। देश में सबसे ज्यादा कीमत उत्तर प्रदेश के विधायक के वोटों की है। उत्तर प्रदेश के विधायक के वोट का भाव 208 है, लेकिन वास्तव में आज की तारीख

कॉमन रूम

में इसे 412 होना चाहिए। कमोबेश यही हाल बिहार, पश्चिम बंगाल और दिल्ली का भी है। बिहार के विधायक के वोट की कीमत 173 है, जिसे 2011 की जनगणना के हिसाब से 341 होनी चाहिए। पश्चिम बंगाल के विधायक की कीमत 151 है, जिसे 2001 के हिसाब से 273 होनी चाहिए। वहीं दिल्ली के विधायक के वोट की कीमत 58 है, इसे 197 होना चाहिए था। जाने-माने संविधान विशेषज्ञ सुभाष कश्यप कहते हैं कि संविधान में यह संशोधन करते समय यह तर्क दिया गया था कि जिस राज्य ने जनसंख्या पर नियंत्रण किया, उसे इस चुनाव में जनसंख्या कम करने की वजह से नुकसान नहीं उठाना चाहिए। यह तर्क सही भी है। जिन राज्यों में बढ़ती जनसंख्या पर नियंत्रण नहीं हो सका है, उसका कारण केवल राज्य सरकारों की काहिली नहीं है।

उत्तर भारत के कई राज्यों में जनसंख्या पर कंट्रोल न कर पाने के कई सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक पहलू भी हैं। जिस पर चाह कर भी सरकार लगाम नहीं लगा पा रही है। गरीबी की मार झेल रहे उत्तर भारत के अधिकांश राज्यों में स्वास्थ्य सुविधाओं का जो हाल है, उसे देखते हुए एक या दो बच्चे पैदा करने के सुझाव को आम आदमी सिरे से खारिज कर देता है। असली समस्या यहीं से शुरू होती है। जब तक देश में शिशु मृत्यु दर पर नियंत्रण नहीं किया जाएगा तब तक जनसंख्या नियंत्रण पर किसी तरह का कानून बेमानी है। इस संबंध में निर्वाचन आयोग में याचिका दाखिल करने वाली संस्था के अध्यक्ष कहते हैं, यह चुनाव हो भी जाए, तो भी सुप्रीम कोर्ट चुनाव आयोग में लंबित याचिका का संज्ञान लेगी और 2026 की समय सीमा को जरूर रद्द किया जाएगा। 2017 में राष्ट्रपति चुनाव 2011 की जनगणना के हिसाब से होगा। वे इसे संविधान की मूल भावना के खिलाफ भी बताते हैं। वे कहते हैं कि केशवानंद भारती के केस में अदालत ने यह साफ किया था कि कोई भी संविधान संशोधन संविधान की मूल भावना के खिलाफ नहीं होगा। और यह संविधान संशोधन उसकी मूल भावना पर चोट है, क्योंकि यह संशोधन नागरिक के बराबरी के अधिकार पर आघात करता है।